AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

पर्यावरणीय चिंता और केदारनाथ सिंह की कविता

ORIGINAL ARTICLE

Author
डॉ. क्षमा कुमारी
सहायक प्राध्यापिका (हिंदी विभाग)
पी. सी. विज्ञान महाविद्यालय
छपरा, सारण, बिहार, भारत

शोध सार

केदारनाथ सिंह समकालीन कविता में एक प्रतिष्ठित कवि हैं। उनका समय हमें उनके काव्य सृजन में प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है। पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी के बीच के कवि हैं केदारनाथ सिंह। प्राकृतिक बिंबो ने उनके काव्य में जो स्थान पाया है और जितनी सहजता से पाया है उतना सरल और सरस चित्रण हिंदी काव्य जगत की एक दुर्लभ संपत्ति है। केदारनाथ सिंह की कविता में जीवन और जगत से जुड़े हुए अनेक पहलुओं को प्रकृति के संदेश और प्रकृति सौंदर्य के माध्यम से समझाया गया है। केदारनाथ सिंह ने अपने काव्य को किसी अन्य काव्य की चेतना से प्रभावित होने से बचाया है। यदि वह चाहते तो छायावादी कवियों की तरह प्रकृति का अलंकारिक चित्रण कर सकते थे, क्योंकि वह जीवन से जुड़े कवि हैं, इसलिए उनकी कविता में प्रकृति चित्रण के माध्यम से एक जीवंत समस्या और उस समस्या से लड़ने का साहस भी हम देख सकते हैं।

मुख्य शब्द

लोक, पर्यावरण, संवेदना, पूंजीवाद, संरक्षण, संस्कृति.

परिचय

केदारनाथ सिंह समकालीन काव्यधारा के एक प्रमुख हस्ताक्षर थे। गंगा और सरयू नदी के संगम से जुड़े गांव चकिया में जन्म होने के कारण उनकी रचनाएं लोग संवेदनाओं को बखूबी अभिव्यक्त करती है। उनकी कविताओं में गांव की मिट्टी की सोंधी खुशबू का चित्रण मिलता है। इनका गांव सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत उर्वर और समृद्ध है। आज जब पर्यावरण में प्रदूषण बढ़ता जा रहा है, तब हमें गांव की याद सहर्ष ही आ जाती है। असमय बारिश का होना, बाढ़ का आना, नदियों का सूखना, मिट्टी का क्षरण, पर्यावरण के वीभत्स होने का परिचायक है। भूमिगत संपदा में उत्तरोत्तर कमी, ओजोन परत के क्षीण होने, पृथ्वी पर प्राकृतिक वनों का तेजी से ह्रास, पेट्रोलियम ईंधन से उत्पन्न गैसें से बढ़ता वायुमंडलीय तापमान आदि ने मानवता के भविष्य के सामने प्रश्न चिन्ह लगा दिए हैं। ऐसे समय में इनकी कविताएं अपने समय की चुनौतियों से दो–दो हाथ करती हुई नजर आती हैं।

21वीं सदी चुनौतियों का एक बड़ा अंबार लेकर हमारे सामने प्रस्तुत हुई है। इस सदी की सबसे बड़ी समस्या पर्यावरण संकट है। औद्योगिकीकरण, पूंजीवाद, भूमंडलीकरण एवं बढ़ती उपयोगिता वादी प्रवृत्तियां आदि कुछ ऐसे तत्व हैं ,जिन्होंने पर्यावरण संकट को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्राकृतिक तत्वों के अधिकाधिक शोषण के चलते प्रकृति को अत्यंत क्षति पहुंची है। पूंजीवाद के प्रसार एवं अत्यधिक लाभ कमाने की इच्छा में मनुष्य ने प्रकृति के साथ भयंकर खिलवाड़ किया है। केदारनाथ सिंह की कविताएं इन्हीं चिंताओं को अभिव्यक्त करती है।

साहित्य के प्रारंभ से ही प्रकृति कवियों के लिए आलंबन और उद्दीपन का काम करती रही है,पर आज वह चित्रण कम चिंता के रूप में ज्यादा उभर कर आ रही है। कवि की संवेदना सूक्ष्म से सूक्ष्म जीवों को भी छूती है साथ ही पूर्व में जो जीव या पेड़ पौधे सौंदर्य के रूप में त्याज्य समझ जाते थे वह आज केंद्र में है। यहां झरबेरी, जलकुंभी, सरसों के फूल, मादा घड़ियाल, झींगुर, घुन, दीमक इत्यादि कितनी ही चीज अपनी गरिमामय उपस्थिति दर्ज कर रहे हैं। यहां प्रकृति चित्रण सिर्फ सौंदर्य का परिचायक नहीं है बल्कि उसके उजड़ेपन को भी प्रस्तुत करती है। केदारनाथ सिंह मिटते पर्यावरण को लेकर अपनी कविताओं में खासे चिंतित नजर आते हैं। अपनी कविताओं के माध्यम से वह इस प्रश्न को समाज के बीच बार–बार उठाते हैं। नीम के झड़ते पत्तों से जिस कवि में उदासी का आलम छा जाता हो उसके लिए यह स्वाभाविक भी है।

केदारनाथ सिंह अपने विभिन्न कविता संग्रहों में इस बात की चर्चा करते नजर आते हैं। यहां से देखो में (पृथ्वी रहेगी, कस्बे की धूल, बाजार, वापसी), अकाल में सारस (अकाल में दूब, अकाल में सारस, सूर्यास्त के बाद एक अंधेरी बस्ती से गुजरते हुए, ओ मेरी उदास पृथ्वी, अड़ियल सांस) बाघ, तालस्तय और साइकिल (पानी की प्रार्थना, पानी था मैं, भुतहा बाग) आदि में पर्यावरण संकट को एक भावात्मक विकलता के साथ अभिव्यक्त किया गया है साथ ही सत्ता और पूंजीवाद के गठजोड़ को भी इंगित किया गया है।

प्रकृति का निर्मम दोहन इस उत्तर पूंजीवादी दौर में हो रहा है, जिससे पर्यावरणीय संकट पैदा हो गया है। पर्यावरणीय संकट मानव जीवन के लिए गंभीर खतरा है। केदारनाथ सिंह का कवि–हृदय इससे वाकिफ है इसलिए उनकी कविताओं में प्रकृति के प्रति आग्रह दिखाई पडता है। 'घर का विचार' नामक कविता ऐसी ही चिंता से उदबुध होकर लिखी गई है। नदी हमारे प्राकृतिक जल स्रोत हैं। मानव अपनी उपयोगितावादी दृष्टि के नाते बाँधों का निर्माण करते हैं। जिससे नदी का नैसर्गिक प्रवाह रोक दिया जाता है और नदियों के प्रवाह मिटते जाते हैं।

"वह मुड गया
एक सूखी नदी की तरफ
जहाँ फैला था दूर तक
भांय– भांय करता एक बालू का मैदान।"[1]

यहाँ नदियों की हृदयस्थली में बसे बालू के खनन को कवि रेखांकित करते हैं। 'भाँय–भाँय शब्द के द्वारा प्रकृति के शोषण की भरमार की और इशारा है। मानव के विकास प्रवृत्तियों ने नदी के प्रवाह से छेड–छाड की है साथ ही उसके तटों को कंकडों से भर दी हैं। इसी प्रकार यातायात के लिए नदियों पर पुल बनाये जाते हैं। विकास के नाम पर चलायी जाने वाली योजनाएँ आरंभ और समाप्त हो जाती है, लेकिन इसमें नदी की अस्मिता, उसके अस्तित्व को काफी चोट पहुँचती है।

केदारनाथ सिंह बहुत ही सजग, जागरूक और संवेदनशील कवि हैं। वो प्रकृति के सजग प्रहरी रहे हैं, जो वस्तु औरों की संवेदना को अछूती छोड जाती है, वही उनकी कवित्व की रचना भूमि है। हर सामान्य और तुच्छ लगनेवाली चीजों पर लेखनी चलाकर लोगों को स्तब्ध कर देती है।

ऐसी ही एक कविता हैः

"आज उस पक्षी को फिर से देखा
जिसे पिछले साल देखा था।
लगभग इन्हीं दिनों
इसी शहर में
क्या नाम था उसका।"[2]

कवि शहर में रहने के कारण कई ग्रामीण चिडियों के नाम भूल गया है, जो घर की छतों, छप्परों, मुंडेरों को अपना समझ कर इर्द–गिर्द घूमती थी। वह अब लुप्तप्राय हो गई है। प्रकारांतर से कवि मोबाईल टावरों के बढने

से गोरैया जैसी चिडिया के लुप्त होने तथा कई अन्य पक्षियों के संकट की ओर संकेत दे रहे हैं।

इसी तरह ग्लोबल वार्मिंग के कारण पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है। पेडों की कटाई, रासायनिक खादों के उपयोग, कीटनाशक दवा के अंधाधुंध छिडकाव, कारखानों के उत्सर्जित कचरों तथा गैसों के उत्सर्जन से पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ रहा है। कवि 'अडियल साँस' कविता में पृथ्वी के गर्म होने या तापमान बढने को केंद्र में रखते हैं।

"पृथ्वी बुखार में जल रही थी,
और इस महान पृथ्वी के
एक छोटे–से सिरे पर
एक छोटी–सी कोठरी में
लेटी थी वह।"[3]

'अकाल में सारस' कविता में कवि पानी के तलाश में भटकते सारसों का चित्रण करते हैं। जल जो धरती पर जीवन का आधार है। पेड–पौधों, जीव–जंतु सबके लिए बहुत जरूरी है। भू–जल का नीचे जाना प्रकृति का दोहन ही तो है। इसे ही कवि व्यक्त कर रहे हैं:

"एक के बाद एक
वे झुंड के झुंड
धीरे–धीरे आए
धीरे–धीरे वे छा गए
सारे आसमान में
धीरे–धीरे उनके क्रेंकार से भर गया
————————
अचानक
एक बुढिया ने उन्हें देखा
जरूर–जरूर
वे पानी की तलाश में आए हैं
उसने सोचा
————————
पानी को खोजते
दूर–देसावर से आए थे वे।"[4]

'पानी की प्रार्थना' कविता में कवि ने पानी के पीछे पूंजीवाद और सत्ता के खेल को उजागर किया है। पानी जो लुप्त होने के कगार पर है, आम आदमी की पहुंच से दूर है वही पानी मार्केट में डिब्बा बंद बोतलों में उपलब्ध है। कवि इसकी पड़ताल करते हुए लिखते हैं:

"और इस घटना पर हिल रहा हूँ अब तक
पर कोई करे भी तो क्या
समय ही कुछ ऐसा है
कि पानी नदी में हो
या किसी चेहरे पर
झाँक कर देखो तो तल में कचरा
कहीं दिख ही जाता है!

पर चिन्ता की कोई बात नहीं
यह बाजारों का समय है
और वहाँ किसी रहस्यमय स्रोत से
मै हमेशा मौजूद हूं
पर अपराध क्षमा हो प्रभु
और यदि मै झूठ बोलूं
तो जलकर हो जाऊं राख
कहते हैं इसमें
आपकी भी सहमति है।"[5]

इसी तरह 'अकाल में दूब' जीवन के प्रतीक के रूप में उभरी है। अकाल में सहसा दूब का दिख जाना जीवंतता, सजीवता और जिजीविषा का परिचायक है :

"भयानक सूखा है
पक्षी छोडकर चले गए हैं
पेडों को
बिलों को छोडकर चले गए हैं चींटे
चींटियाँ
देहरी और चौखट
पता नहीं कहाँ–किधर चले गए हैं
घरों को छोडकर
————————
लौटकर यह खबर
देता हूँ पिता को
अँधेरे में भी
दमक उठता है उनका चेहरा
है–अभी बहुत कुछ है
अगर बची है दूब...
बुदबुदाते हैं वे।"[6]

उपभोक्तावादी संस्कृति, उत्तर आधुनिकतावाद और विकास की अंधी दौड के मकडजाल में हम निरंतर प्रकृति का दोहन कर रहे है। कवि ने अपनी कविताओं के माध्यम से पर्यावरणीय चिंता व्यक्त की है। वो चिंतित तो है, पर निराश नहीं है। आशा के संचार को व्यक्त करती है 'यह पृथ्वी रहेगी' कविता...।

"मुझे विश्वास है
यह पृथ्वी रहेगी
यदि और कहीं नहीं तो मेरी हड्डियों में
यह रहेगी जैसे पेड के तने में
रहते हैं दीमक
जैसे दाने में रह लेता है घुन
यह रहेगी प्रलय के बाद भी मेरे अंदर
यदि और कहीं नहीं तो मेरी जबान।"[7]

निष्कर्ष

केदारनाथ सिंह की कविताएँ खाँचेवाली कविताएँ नहीं है, वो बनी–बनाई दुनिया के भीतर रहकर कविता नहीं रचते, वो कोई ताम–झाम या मुद्राएँ भी नहीं अपनाते, बल्कि वह जो जीते हैं, जैसे जीते हैं, वैसा ही कविता में ले आते हैं। उनकी चिंताएँ सिर्फ भावुक चिंताएँ नहीं थी, बल्कि वो सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक सरोकारों की चिंताएँ थीं। उनकी कविताएँ प्रकृति के सौंदर्य और संरक्षण की आवश्यकता पर जोड़ देती है।

संदर्भ सूची

1. सिंह, केदारनाथ (1999) *उत्तर कबीर एवं अन्य रचनाएँ,* राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. 1–बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली 02, प्रथम संस्करण, पृ–34।
2. सिंह, केदारनाथ (1983) *यहाँ से देखो,* राधाकृष्ण प्रकाशन, 2 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली 02, प्रथम संस्करण, पृ. 41।
3. hindisamay.com (अडियल साँस) Assess on 28 February 2024
4. hindisamay.com (अकाल में सारस) Assess on 2 March 2024
5. hi.m.wikibooks.org (पानी की प्रार्थना) Assess on 28 February 2024
6. hindisamay.com (अकाल में दूब) Assess on 2 March 2024
7. hindisamay.com (यह पृथ्वी रहेगी) Assess on 2 March 2024

––==00==––